



2026:AHC-LKO:21395

उच्च न्यायालय, न्यायिक खंडपीठ इलाहाबाद, लखनऊ

आपराधिक अपील संख्या - 1293 वर्ष 2010

राम नरेश एवं अन्य

.....

अपीलकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य,

.....

प्रतिवादीगण

अपीलकर्ता की ओर से अधिवक्ता	:	संदीप श्रीवास्तव
प्रतिवादी की ओर से अधिवक्ता	:	शासकीय अधिवक्ता, राजेश पांडेय

न्यायालय संख्या - 12माननीय न्यायमूर्ति मनीष माथुर

1. श्री संदीप श्रीवास्तव, अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता तथा राज्य/प्रतिपक्ष की ओर से विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता को सुना गया।
2. यह तात्कालिक आपराधिक अपील दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 374(2) के अंतर्गत, दिनांक 27.04.2010 को पारित निर्णय एवं आदेश के विरुद्ध, जो कि अपर सत्र न्यायाधीश, न्यायालय संख्या 6, रायबरेली द्वारा सत्र वाद संख्या 131/2000 (राज्य बनाम राम नरेश एवं अन्य), जो कि अपराध संख्या 85/1997, धाराएं 279, 338, 427, 308, 323, 506 भा.दं.सं., थाना भदोखर, जनपद रायबरेली से उत्पन्न हुआ,

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

में पारित किया गया, दायर की गई है; जिसके अंतर्गत अपीलकर्ताओं को दोषसिद्ध करते हुए निम्न प्रकार से दंडित किया गया—

(i) धारा 308 भा.दं.सं. के अंतर्गत चार वर्ष का कठोर कारावास तथा ₹1,000/- का जुर्माना प्रत्येक पर, तथा जुर्माना अदा न करने की दशा में दो माह का अतिरिक्त कारावास।

(ii) धारा 325 भा.दं.सं. के अंतर्गत तीन वर्ष का कारावास तथा ₹1,000/- का जुर्माना प्रत्येक पर, तथा जुर्माना अदा न करने की दशा में दो माह का अतिरिक्त कारावास।

(iii) धारा 323 भा.दं.सं. के अंतर्गत छह माह का कारावास।

(iv) धारा 427 भा.दं.सं. के अंतर्गत छह माह का कारावास।

(v) धारा 506 भा.दं.सं. के अंतर्गत छह माह का कारावास।

3. प्रथम सूचना रिपोर्ट (एफ.आई.आर.) के कथनों के अनुसार, घटना दिनांक 14.05.1997 को अपराहन 03:30 बजे घटित होना बताई गई है, जब शिकायतकर्ता एवं उसका भाई अपनी मोटरसाइकिल से मार्ग में जा रहे थे, तभी अपीलकर्ता एवं उसके परिवारजनों द्वारा, जो अपनी जीप से आए थे, उन्हें रोक लिया गया। इसके पश्चात उन पर हमला किया गया तथा शिकायतकर्ता एवं उसके भाई को गंभीर चोटें पहुंचाई गई, जिन्हें राहगीरों के हस्तक्षेप से बचाया जा सका। आरोपों से यह भी प्रकट होता है कि यह हमला पूर्व वैमनस्य के कारण किया गया, जिसके संबंध में दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 107 के अंतर्गत कार्यवाही भी लंबित थी।

4. अभियुक्त-अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन किया है कि अपीलकर्ताओं को पूर्व में किसी भी अपराध के लिए दोषसिद्ध नहीं किया गया है। प्रारम्भ में ही उन्होंने यह भी प्रस्तुत किया कि वे आक्षेपित निर्णय एवं दोषसिद्धि आदेश को चुनौती नहीं दे रहे हैं, अपितु इस अपील में अपनी दलीलों को केवल दण्डादेश के आदेश तक ही सीमित रख रहे हैं।

5. अभियुक्त-अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता द्वारा किए गए उपर्युक्त निवेदन के दृष्टिगत, अपील को उस सीमा तक निरस्त किया जाता है, जहाँ तक वह आक्षेपित निर्णय एवं दोषसिद्धि आदेश से संबंधित है। अधीनस्थ न्यायालय द्वारा दिनांक

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

27.04.2010 को पारित निर्णय एवं दोषसिद्धि आदेश की पुष्टि (बरकरार) की जाती है।

6. अभियुक्त-अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन किया है कि उपर्युक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों, विशेषतः इस तथ्य के दृष्टिगत कि अपीलकर्ताओं को पूर्व में किसी भी अपराध में दोषसिद्ध नहीं किया गया है, विचारण न्यायालय को परिवीक्षा अधिनियम, 1958 (जिसे आगे 'अधिनियम, 1958' कहा गया है) के प्रावधानों का अनुप्रयोग करना चाहिए था। आगे यह भी प्रस्तुत किया गया है कि विचारण न्यायालय ने न तो अधिनियम, 1958 के प्रावधानों को लागू किया और न ही दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 के प्रावधानों पर विचार किया, जबकि अभियुक्त-अपीलकर्ताओं को दण्डित किया गया। आक्षेपित निर्णय में यह भी कहीं परिलक्षित नहीं होता कि धारा 360 दण्ड प्रक्रिया संहिता अथवा अधिनियम, 1958 के लाभ से वंचित रखने हेतु कोई विशेष कारण अभिलिखित किया गया हो।

दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 361 का अनुप्रयोग, लाभकारी प्रावधानों अर्थात् धारा 360 दण्ड प्रक्रिया संहिता अथवा परिवीक्षा अधिनियम, 1958 के प्रावधानों के साथ या बिना, किया जाना अपेक्षित है। यदि न्यायालय इन प्रावधानों में से किसी का भी अनुप्रयोग न करने का निर्णय लेता है, तो उसे ऐसे अनुप्रयोग से वंचित रखने के विशेष कारण अभिलिखित करने होते हैं, बशर्ते कि अभियुक्त अन्यथा धारा 360 दण्ड प्रक्रिया संहिता या अधिनियम, 1958 की धारा 3 अथवा 4 के लाभ के लिए पात्र हो।

7. अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन किया है कि अभियुक्त-अपीलकर्ताओं को लाभकारी विधि, अर्थात् परिवीक्षा अधिनियम, 1958 के प्रावधानों का लाभ प्राप्त करने का वैधानिक अधिकार है तथा न्यायालय पर यह दायित्व था कि वह दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 361 के अधीन, धारा 360 दण्ड प्रक्रिया संहिता अथवा अधिनियम, 1958 की धारा 3 या 4 की लागू योग्यता पर विचार करता। यदि धारा 360 दण्ड प्रक्रिया संहिता अथवा अधिनियम, 1958 के प्रावधानों को लागू नहीं किया गया, तो न्यायालय को उसके कारण अभिलिखित करने चाहिए थे। अतः यह निवेदन किया गया है कि इस सीमा तक आक्षेपित निर्णय एवं आदेश गंभीर विधिक

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

त्रुटि से ग्रस्त है, जो दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 361 के प्रावधानों का उल्लंघन करता है, और इसलिए इसे बनाए नहीं रखा जा सकता।

8. विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता ने इस आपराधिक अपील का यह कहते हुए विरोध किया है कि दोषसिद्धि का निर्णय एवं आदेश सुसंगत है तथा प्रासंगिक अभिलेखों एवं साक्ष्यों पर समुचित विचार के उपरांत पारित किया गया है। तथापि, उन्होंने यह स्वीकार किया है कि इस तथ्य के संबंध में कोई प्रतिकूल सामग्री अभिलेख पर नहीं है कि अपीलकर्ताओं का कोई पूर्व आपराधिक इतिहास नहीं है। यह भी प्रस्तुत किया गया है कि दण्ड प्रक्रिया संहिता की धाराओं 360/361 के प्रावधानों के आलोक में, यह न्यायालय उपयुक्त लाभ प्रदान किए जाने पर विचार कर सकता है।

9. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत तर्कों पर विचार करने तथा अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के अवलोकन के उपरांत, चूंकि वर्तमान में केवल सदाचरण के आधार पर परिवीक्षा के प्रश्न का ही निर्णय किया जाना है, अतः दण्ड प्रक्रिया संहिता की धाराएं 360 एवं 361 उन आदेशों से संबंधित हैं जिनके अंतर्गत अभियुक्त को सदाचरण पर परिवीक्षा या चेतावनी के पश्चात रिहा किया जा सकता है। इन प्रावधानों के अनुसार, जहां कोई व्यक्ति, जिसकी आयु 21 वर्ष से कम नहीं है, ऐसे अपराध के लिए दोषसिद्ध होता है जो केवल जुर्माने से या अधिकतम सात वर्ष तक के कारावास से दंडनीय है, अथवा जहां कोई व्यक्ति जिसकी आयु 21 वर्ष से कम है, ऐसे अपराध के लिए दोषसिद्ध होता है जो मृत्युदंड या आजीवन कारावास से दंडनीय नहीं है, तथा उसके विरुद्ध कोई पूर्व दोषसिद्धि सिद्ध नहीं है, वहां दोषसिद्धि अभिलिखित करने वाला न्यायालय अभियुक्त की आयु, चरित्र या पूर्ववृत्त तथा अपराध के घटित होने की परिस्थितियों सहित विभिन्न पहलुओं पर विचार करने के लिए बाध्य है। ऐसी स्थिति में, न्यायालय को अभियुक्त को दंडित करने के स्थान पर, उसे सदाचरण पर परिवीक्षा पर रिहा करना चाहिए तथा उससे यह निर्देशित करना चाहिए कि वह एक बंधपत्र निष्पादित करे, चाहे जमानतदारों सहित या बिना, ताकि वह निर्धारित अवधि के दौरान न्यायालय के समक्ष उपस्थित हो तथा शांति एवं

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

सद्व्यवहार बनाए रखे। उक्त शक्तियों के प्रयोग का प्रावधान अपीलीय न्यायालय, उच्च न्यायालय अथवा सत्र न्यायालय के लिए भी किया गया है।

10. उक्त संहिता की धारा 361 यह उपबंधित करती है कि कुछ परिस्थितियों में विशेष कारणों का अभिलेखन आवश्यक है। अर्थात् यदि कोई अभियुक्त धारा 360 दण्ड प्रक्रिया संहिता के लाभ अथवा परीक्षा अधिनियम, 1958 के प्रावधानों के अंतर्गत, या बाल अधिनियम, 1960 के अंतर्गत किशोर अपराधी के रूप में, अथवा किसी अन्य ऐसे विधि के अंतर्गत जो किशोर अपराधियों के प्रशिक्षण या पुनर्वास से संबंधित हो, लाभ प्राप्त करने का अधिकारी है, किन्तु उसे ऐसा लाभ प्रदान नहीं किया जाता है, तो न्यायालय अपने निर्णय में ऐसे लाभ न दिए जाने के विशेष कारण अभिलिखित करेगा।

11. इस विषय पर केंद्रीय विधि अर्थात् परीक्षा अधिनियम, 1958 की धारा 3 एवं 4 विशेष रूप से यह प्रावधान करती हैं कि न्यायालय को कुछ अपराधियों को चेतावनी देकर रिहा करने का अधिकार है तथा कुछ अपराधियों को सदाचरण की परीक्षा पर रिहा करने की शक्ति भी प्रदान की गई है।

12. उत्तर प्रदेश राज्य में लागू राज्यीय विधि उत्तर प्रदेश प्रथम अपराधी परीक्षा अधिनियम, 1938 है, जिसकी धारा 3 एवं 4 क्रमशः न्यायालय को कुछ अपराधियों को चेतावनी देकर रिहा करने तथा उन्हें सदाचरण की परीक्षा पर रिहा करने की शक्तियों से संबंधित हैं।

13. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धाराओं 360 एवं 361 की लागू योग्यता के प्रश्न पर इस न्यायालय की द्वैधपीठ द्वारा **उत्तर प्रदेश बनाम मिस्री लाल एवं अन्य**, 1982 सीआर.एल.जे. 1420 में विचार किया गया है। उक्त निर्णय का प्रासंगिक अंश निम्नलिखित है—

“26. ...उत्तर प्रदेश में धारा 360 के अनुप्रयोग को वर्ष 1975 के एक अध्यादेश द्वारा समाप्त कर दिया गया था। उक्त अध्यादेश को निरस्त कर उसके स्थान पर दण्ड प्रक्रिया संहिता (उत्तर प्रदेश संशोधन) अधिनियम, संख्या 16, वर्ष 1976 द्वारा प्रतिस्थापित

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

किया गया। इस अधिनियम को 30-4-1975 को राष्ट्रपति की स्वीकृति प्राप्त हुई तथा इसे उत्तर प्रदेश के असाधारण राजपत्र दिनांक 1-5-1976 में प्रकाशित किया गया। इस अधिनियम की धारा 12 द्वारा उक्त अध्यादेश को निरस्त किया गया तथा यह उपबंध किया गया कि इस प्रकार के निरसन के बावजूद, अध्यादेश के अंतर्गत किया गया कोई भी कार्य या की गई कोई भी कार्यवाही ऐसे मानी जाएगी मानो वह इस अधिनियम के प्रावधानों के अंतर्गत की गई हो, जैसे कि यह अधिनियम 28 नवम्बर, 1975 से प्रभावी हो गया हो। विद्वान विचारण न्यायाधीश ने वाद का निर्णय 2-2-1976 को किया। संशोधन अधिनियम संख्या 16, वर्ष 1976 की धारा 10 द्वारा संहिता की धारा 484 में संशोधन करते हुए उपधारा (d) के पश्चात निम्नलिखित उपधारा (e) जोड़ी गई—

“(e) ...यूनाइटेड प्रोविंसेज़ प्रथम अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1938 ... उत्तर प्रदेश राज्य में प्रवृत्त (प्रभावी) बना रहेगा, और तदनुसार इस संहिता की धारा 360 के प्रावधान उस राज्य पर लागू नहीं होंगे तथा धारा 361 के प्रावधान इस प्रकार लागू होंगे कि उसमें उल्लिखित केंद्रीय अधिनियमों के संदर्भ के स्थान पर उस राज्य में प्रवृत्त समतुल्य अधिनियम के संदर्भ माने जाएंगे।”

दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 361 यह उपबंधित करती है कि यदि किसी मामले में न्यायालय किसी अभियुक्त के साथ धारा 360 के अंतर्गत, अथवा परिवीक्षा अधिनियम, 1958 के प्रावधानों के अंतर्गत, अथवा बाल अधिनियम, 1960 के अंतर्गत किशोर अपराधी के रूप में, या उस समय प्रभावी किसी अन्य विधि के अंतर्गत, जो किशोर अपराधियों के उपचार, प्रशिक्षण या पुनर्वास से संबंधित हो, कार्यवाही कर सकता था, किन्तु ऐसा नहीं किया गया, तो न्यायालय अपने निर्णय में ऐसा न करने के विशेष कारणों को अभिलिखित करेगा।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

उपयुक्त प्रावधान को धारा 484 के खंड (e) के साथ पढ़ने से यह निष्कर्ष निकलता है कि न्यायालय के लिए यह आवश्यक है कि यदि उत्तर प्रदेश प्रथम अपराधी परीक्षा अधिनियम, 1938 के प्रावधानों का लाभ प्रदान नहीं किया जाता है, तो उसके लिए विशेष कारण अभिलिखित किए जाएं।

14. अतः जहाँ-जहाँ उत्तर प्रदेश प्रथम अपराधी परीक्षा अधिनियम, 1938 लागू है, वहाँ उसी के प्रावधानों का अनुपालन किया जाएगा, न कि दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 का। इस प्रकार, किसी विशिष्ट क्षेत्र में परीक्षा अधिनियम के प्रवर्तन से उस क्षेत्र में धारा 360 दण्ड प्रक्रिया संहिता की प्रयोज्यता अपवर्जित हो जाती है। तथापि, दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 361 के अनुसार यह न्यायालय का अनिवार्य कर्तव्य होगा कि वह इस पर विचार करे कि परीक्षा अधिनियम के अंतर्गत लाभ क्यों न प्रदान किया जाए, तथा यदि ऐसा लाभ प्रदान नहीं किया जाता है, तो उसके लिए विशेष कारण अभिलिखित करे।

15. अभियुक्त-अपीलकर्ताओं को परीक्षा अधिनियम का लाभ प्रदान किए जाने की उपयुक्तता के प्रश्न पर आते हुए, **सीताराम पासवान एवं अन्य बनाम बिहार राज्य**, ए.आई.आर. 2005 एस.सी. 3534 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित प्रतिपादित किया है—

“उक्त विवेकाधीन शक्ति का प्रयोग करते समय न्यायालय को प्रकरण की परिस्थितियों, अपराध की प्रकृति तथा अपराधी के चरित्र पर विचार करना आवश्यक है। अपराध की प्रकृति पर विचार करते हुए न्यायालय को उसके गंभीरता के स्तर तथा उस अपराध का पीड़ित पर पड़े प्रभाव का यथार्थ मूल्यांकन करना चाहिए। परीक्षा अधिनियम की धारा 4 के अंतर्गत अभियुक्त को उपलब्ध लाभ, उक्त प्रावधानों में निहित सीमाओं के अधीन है तथा ‘कर सकेगा’ शब्द से यह स्पष्ट है कि यह पूर्णतः न्यायालय के विवेक पर निर्भर है कि वह धारा 3 अथवा 4 के अंतर्गत अपराधी को रिहा करे या नहीं, जो कि अपराध की प्रकृति, अपराधी के चरित्र तथा समग्र परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए तय

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

किया जाएगा। परिवीक्षा अधिनियम की धारा 4 के अंतर्गत यह शक्ति न्यायालय को तब प्राप्त होती है जब कोई व्यक्ति ऐसे अपराध का दोषी पाया जाता है, जो मृत्युदंड या आजीवन कारावास से दंडनीय नहीं है। यह शक्ति न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि के समय प्रयोग की जा सकती है तथा यदि न्यायालय यह उचित समझे कि प्रकरण की परिस्थितियों, अपराध की प्रकृति तथा अपराधी के चरित्र को ध्यान में रखते हुए अभियुक्त को इसका लाभ दिया जाना चाहिए, तो यह शक्ति अपीलीय या पुनरीक्षण स्तर पर भी तथा भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अंतर्गत अपील सुनते समय इस न्यायालय द्वारा भी प्रयोग की जा सकती है।”

16. *मो. हाशिम बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य*, ए.आई.आर. 2017 एस.सी. 660 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित प्रतिपादित किया—

“20. ...रतन लाल बनाम पंजाब राज्य, ए.आई.आर. 1965 एस.सी. 444 में, माननीय न्यायमूर्ति सुब्बा राव ने बहुमत की ओर से इस प्रकार अभिमत व्यक्त किया—”

“यह अधिनियम दंडशास्त्र के क्षेत्र में आधुनिक उदार सुधारवादी प्रवृत्ति की प्रगति का एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर है। यह उस सिद्धांत की स्वीकृति का परिणाम है कि आपराधिक विधि का उद्देश्य केवल दंड देना नहीं, बल्कि अपराधी के सुधार पर अधिक केंद्रित होना चाहिए। सामान्य रूप से, यह अधिनियम 21 वर्ष से कम आयु के अपराधियों और उससे अधिक आयु के अपराधियों के बीच भेद करता है, तथा उन अपराधियों में भी अंतर करता है जो ऐसे अपराध के दोषी हैं जो मृत्युदंड या आजीवन कारावास से दंडनीय हैं और वे जो अपेक्षाकृत कम गंभीर अपराध के दोषी हैं। जहाँ 21 वर्ष से अधिक आयु के अपराधियों के मामले में न्यायालय को, अधिनियम के उपयुक्त प्रावधानों में निर्धारित शर्तों के अधीन, उन्हें चेतावनी देकर या सदाचरण पर परिवीक्षा पर रिहा करने का पूर्ण विवेकाधिकार प्राप्त है, वहीं 21 वर्ष से कम आयु के अपराधियों के मामले में न्यायालय को यह निर्देश

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

दिया गया है कि उन्हें कारावास की सजा न दी जाए, जब तक कि न्यायालय यह संतुष्ट न हो जाए कि प्रकरण की परिस्थितियों, अपराध की प्रकृति तथा अपराधियों के चरित्र को ध्यान में रखते हुए, अधिनियम की धारा 3 एवं 4 के अंतर्गत उनके साथ व्यवहार करना उपयुक्त नहीं है।”

17. उपर्युक्त प्रावधानों एवं निर्णयों की वर्तमान प्रकरण में प्रयोज्यता पर विचार करने से यह स्पष्ट होता है कि घटना वर्ष 1997 की है, जिसमें अधिकतम तीन वर्ष के कारावास तथा जुर्माने का दण्ड आरोपित किया गया है। लगभग तीन दशक व्यतीत हो चुके हैं तथा आक्षेपित निर्णय के अनुसार अभियुक्त-अपीलकर्ताओं के विरुद्ध न तो पूर्व का और न ही पश्चात का कोई आपराधिक इतिहास विद्यमान है। आरोप भी केवल दो पक्षों के मध्य हुए एक विवाद/झगड़े से संबंधित है, जिसमें लगी चोटें घातक नहीं थीं। अतः इस न्यायालय की सुविचारित राय में, उपर्युक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए, विशेषकर जब कोई जघन्य अपराध घटित नहीं हुआ है तथा अपीलकर्ता उक्त अवधि के दौरान पर्याप्त रूप से प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना कर चुके हैं, वर्तमान समय में कारावास की सजा को क्रियान्वित करना उपयुक्त नहीं होगा।

18. जहाँ तक दोषसिद्धि के भाग का प्रश्न है, इस न्यायालय को अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा पारित आदेश में कोई अवैधता, विकृति या त्रुटि परिलक्षित नहीं होती है। तथापि, उपर्युक्त की गई चर्चा को दृष्टिगत रखते हुए, अभियुक्त-अपीलकर्ताओं पर आरोपित दण्ड में संशोधन किया जाना आवश्यक है।

19. अपील आंशिक रूप से निम्नलिखित संशोधनों के साथ स्वीकृत की जाती है—

19.1. अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा अभियुक्त-अपीलकर्ताओं की दोषसिद्धि यथावत् बरकरार रखी जाती है। तथापि, अभियुक्त-अपीलकर्ताओं के दण्ड में यह संशोधन किया जाता है कि उन्हें उत्तर प्रदेश प्रथम अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की धारा 4 का लाभ प्रदान करते हुए, एक वर्ष की अवधि के लिए सदाचार की परिवीक्षा पर रिहा किया जाता है, इस शर्त के साथ कि प्रत्येक अपीलकर्ता आज से एक वर्ष तक शांति एवं सदाचार बनाए रखेगा

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

तथा ₹30,000/- (रुपये तीस हजार मात्र) की राशि के दो जमानतदार एवं व्यक्तिगत बंधपत्र अधीनस्थ न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करेगा। साथ ही, इस आशय का एक उपक्रम भी प्रस्तुत करेगा कि वह उक्त एक वर्ष की अवधि के दौरान शांति एवं सद्व्यवहार बनाए रखेगा। यदि उपर्युक्त शर्तों का किसी प्रकार से उल्लंघन किया जाता है, तो अपीलकर्ताओं को अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा प्रदत्त दण्ड का निर्वहन करना होगा। उक्त बंधपत्र आज से एक माह के भीतर जिला परिवीक्षा अधिकारी, रायबरेली के समक्ष, संबंधित न्यायालय को सूचित करते हुए, दाखिल किए जाएंगे।

20. आदेश की प्रमाणित प्रति आवश्यक अनुपालन हेतु संबंधित न्यायालय तथा जिला परिवीक्षा अधिकारी, रायबरेली को तत्काल प्रेषित की जाए।

दिनांक : 25 मार्च, 2026

लक्ष्मण

(न्यायमूर्ति मनीष माथुर)

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।